[1987] 2 उम० नि० प० 757

डा० डी० सी० वधवा और अन्य

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

20 दिसंबर, 1986

मुख्य न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती, न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र, जी० एल० ओझा, एम० एम० दत्त और के० एन० सिंह

संविधान, 1950—अनुच्छेद 32 और 213—सुने जाने का अधिकार—अध्यादेश—पुनः प्रख्यापन—शक्ति का आभासी प्रयोग—यदि किसी राज्य का राज्यपाल, अध्यादेशों के स्थान पर अधिनियम प्रतिस्थापित किए बिना, समय-समय पर अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करता रहता है, तो कार्यपालिका द्वारा राज्यपाल के माध्यम से अपनाई गई यह परिपाटी शक्ति के आभासी प्रयोग की कोटि में आएगी और उससे सांविधानिक उपबंधों का घोर अतिक्रमण होता है—याची ने राजनीति विज्ञान का काफी अनुसंधान किया है, इसलिए उसे सुने जाने का अधिकार है ।

इन चार याचियों ने ये रिट याचिकाएं बड़े पैमाने पर अध्यादेशों को प्रख्यापित और पुन: प्रख्यापित करने की बिहार राज्य की परिपाटी की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए फाइल की हैं और विशेष रूप से उन्होंने बिहार के राज्यपाल द्वारा जारी किए गए तीन भिन्न अध्यादेशों, अर्थात् (i) बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश, 1983, (ii) बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश, 1983 और (iii) बिहार ईंट प्रदाय (नियंत्रण) तीसरा अध्यादेश, 1983 की सांविधानिक विधिमान्यता को चुनौती दी है । प्रत्यर्थियों की ओर से यह दलील दी गई कि याचियों के पास इन रिट याचिकाओं को चलाते रहने के संबंध में सुने जाने का कोई अधिकार नहीं है और वे समय-समय पर अध्यादेशों को पुन: प्रख्यापित करने की बिहार राज्य में प्रचलित परिपाटी को चुनौती देने के हकदार नहीं हैं । अत: उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत इन रिट याचिकाओं में विचारार्थ उद्‌भूत होने वाला प्रश्न यह है कि क्या राज्यपाल अनिश्चित कालावधि के लिए अध्यादेशों का पुन: प्रख्यापन करते चले जा सकते हैं और इस प्रकार विधानमंडल की विधान बनाने की शक्ति स्वयं ग्रहण कर सकते हैं, यद्यपि उन्हें अनुच्छेद 213 के अधीन वह शक्ति केवल उस समय तत्काल कार्रवाई करने में समर्थ बनाने के प्रयोजनार्थ प्रदत्त की गई है, जबकि राज्य विधान सभा सत्र में न हो अथवा विधान परिषद् वाले राज्य में विधानमंडल के दोनों सदन सत्र में न हों । रिट याचिकाएं मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित—न्यायालय की राय में, याची निश्चित रूप से समय-समय पर अध्यादेशों को पुन: प्रख्यापित करने की बिहार राज्य में प्रचलित परिपाटी को चुनौती देने के हकदार हैं; क्योंकि वे ऐसे पर-व्यक्ति मात्र नहीं हैं जिनके पास इस परिपाटी की विधिमान्यता को चुनौती देने का कोई विधिक हित नहीं है । विधिसम्मत शासन हमारे संविधान का केंद्र-बिंदु

1986(12) eILR(PAT) SC 1

है तथा विधिसम्मत शासन का सार यह है कि राज्य द्वारा, भले ही वह विधानमंडल हो या कार्यपालिका या कोई अन्य प्राधिकारी, शक्ति का प्रयोग सांविधानिक परिसीमाओं के भीतर होना चाहिए और यदि कार्यपालिका द्वारा कोई ऐसी परिपाटी अपनाई जाती है, जो उसकी सांविधानिक परिसीमाओं का गंभीर और व्यवस्थित रूप से अतिक्रमण करती हो, तो याची सं० 1 जनता के एक व्यक्ति के रूप में रिट याचिका फाइल करके ऐसी परिपाटी को चुनौती देने के लिए पर्याप्त रूप से हितबद्ध होगा तथा इस न्यायालय का यह सांविधानिक कर्तव्य होगा कि वह रिट याचिका पर विचार करे और ऐसी परिपाटी की विधिमान्यता का न्यायनिर्णयन करे। (पैरा 3)

इन रिट याचिकाओं में न्यायालय के समक्ष उठाया गया प्रश्न किसी भी दशा में सैद्धांतिक प्रकृति का नहीं है तथा न्यायालय द्वारा उसका न्यायनिर्णयन अवश्य ही किया जाना चाहिए क्योंकि बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश अब भी प्रवृत्त है, अतः उसकी सांविधानिक विधिमान्यता को दी गई चुनौती की परीक्षा करने के लिए उसे सैद्धांतिक नहीं कहा जा सकता। इन रिट याचिकाओं में उठाया गया प्रश्न उसी प्रकार सर्वाधिक सांविधानिक महत्व का प्रश्न है जिस प्रकार अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करने संबंधी राज्यपाल की शक्ति, और यह लोक हित में है कि कार्यपालिका यह जाने कि अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन के विषय में राज्यपाल की शक्ति पर कौन-सी परिसीमाएं अधिरोपित हैं। (पैरा 4)

यह प्रतीत होता है कि बिहार सरकार ने समय-समय पर अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करते रहने की सुस्थिर परिपाटी बना ली थी और ऐसा जानबूझकर किया गया था। इस आधार पर यह प्रतीत होता है कि विधानमंडल में किसी विधान को पुरःस्थापित करना आवश्यक नहीं है, किंतु सरकार समय-समय पर राज्यपाल से अध्यादेश पुनः प्रख्यापित कराकर विधि बनाती रह सकती है। प्रश्न यह है कि क्या बिहार सरकार द्वारा अपनाई गई यह परिपाटी इस आधार पर न्यायोचित ठहराई जा सकती थी कि वह अध्यादेश का प्रख्यापन करने की उस शक्ति के विधिसम्मत प्रयोग का प्रतिनिधित्व करती है जो संविधान के अनुच्छेद 213 के अधीन राज्यपाल को प्रदत्त की गई है। इस प्रश्न का अवधारण अनुच्छेद 213 के, जो राज्य के राज्यपाल को अध्यादेश प्रख्यापित करने की शक्ति प्रदत्त करता है, सही निर्वचन पर निर्भर है। (पैरा 6)

अध्यादेश जारी करने के लिए राज्यपाल को प्रदत्त शक्ति आपत्कालीन शक्ति की प्रकृति की है जो राज्यपाल में इस उद्देश्य से निहित की गई है कि वह तब, जब विधानमंडल सत्र में न हो, आवश्यकता पड़ने पर तात्कालिक कार्रवाई कर सके। किंतु राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित प्रत्येक अध्यादेश विधानमंडल के समक्ष रखा जाना चाहिए तथा वह विधानमंडल के पुनः समवेत होने की तारीख से छह सप्ताह की अवधि समाप्त हो जाने पर या उस अवधि के समाप्त होने से पूर्व उसे अननुमोदित करने वाला कोई संकल्प पारित कर दिए जाने पर लागू नहीं रहेगा। इस उपबंध का उद्देश्य यह है कि चूंकि अध्यादेश जारी करने के लिए राज्यपाल को प्रदत्त शक्ति विधानमंडल के सत्र में न होने की दशा में प्रयोक्तव्य आपत्कालीन शक्ति है इसलिए तात्कालिक कार्रवाई की अपेक्षा करने वाली किसी स्थिति से निपटने के लिए राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित किसी ऐसे अध्यादेश का, जिसके लिए

1986(12) eILR(PAT) SC 1

विधानमंडल के पुनः समवेत होने की प्रतीक्षा नहीं की जा सकती, अस्तित्वकालावधि आवश्यक रूप से परिसीमित होनी चाहिए। यही कारण है कि यह उपबंध किया गया है कि विधान-मंडल के समवेत होने की तारीख से छह सप्ताह की समाप्ति पर अध्यादेश लागू नहीं रहेगा। यदि इस समय के भीतर विधानमंडल ऐसा कोई अधिनियम पारित नहीं करता, तो अध्यादेश समाप्त हो जाना चाहिए। सरकार विधानमंडल की उपेक्षा नहीं कर सकती तथा अध्यादेश के उपबंधों को विधानमंडल द्वारा पारित किसी अधिनियम में अधिनियमित किए बिना, विधानमंडल का सत्रावसान होते ही अध्यादेश का पुनः प्रख्यापन नहीं करा सकती। (पैरा 7)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1982]	[1982] 4 उम० नि० प० 1=[1982] 2 एस० सी० आर० 365 : **एस० पी० गुप्त और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य;**	3
[1974]	[1974] 3 उम० नि० प० 1045=[1970] 3 एस० सी० आर० 530 : **आर० सी० कूपर** बनाम **भारत संघ;**	8
[1965]	[1965] 1 एस० सी० आर० 614 : **वज्रवेलु मुदालियर** बनाम **विशेष उप-कलक्टर, मद्रास और अन्य;**	7
[1954]	[1954] 1 एस० सी० आर० 1 : **के० जी० गजपति नारायण देव और अन्य** बनाम **उड़ीसा राज्य;**	7
[1950]	ए० आई० आर० 1950 प्रि० कौं० 59 : **लक्ष्मीधर मिश्र** बनाम **रंगलाल और अन्य;**	8
[1943]	ए० आई० आर० 1943 प्रि० कौं० 153 : **राजाराम बहादुर कमलेश नारायण सिंह** बनाम **आय-कर आयुक्त;**	8
[1931]	ए० आई० आर० 1931 प्रि० कौं० 111 : **भगत सिंह और अन्य** बनाम **एम्पायर;**	8

आरंभिक अधिकारिता : 1984 की रिट याचिका सं० 412-15.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन।

याचियों की ओर से — सर्वश्री साली जे० सोराबजी, जे० बी० दादाचंजी, रवीन्द्र नारायण, टी० एन० अंसारी, जोअल पारेस, एस० सुकुमारन, डा० चंद्रचूड़

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री एल० एन० सिन्हा, जय नारायण, पी० पी० सिंह, डी० गोवर्धन और कु० एस० रेलन

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती ने दिया।

मु० न्या० भगवती—संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन इन याचिकाओं में अत्यंत सांविधानिक महत्व का एक अल्प प्रश्न उद्भूत हुआ है जिसका संबंध संविधान के अनुच्छेद 213 के अधीन राज्यपाल की उस शक्ति से है जिसके अधीन वे समय-समय पर अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन, ऐसे अध्यादेशों के स्थान पर विधानमंडल के अधिनियम प्रतिस्थापित कराए बिना, करते हैं। प्रश्न यह है कि क्या राज्यपाल अनिश्चित कालावधि के लिए अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करते चले जा सकते हैं और इस प्रकार विधान बनाने की विधानमंडल की शक्ति स्वयं ग्रहण कर सकते हैं, यद्यपि उन्हें अनुच्छेद 213 के अधीन वह शक्ति केवल उस समय तत्काल कार्रवाई करने में समर्थ बनाने के प्रयोजनार्थ प्रदत्त की गई है जब राज्य विधानसभा सत्र में न हो अथवा तब जबकि विधान परिषद् वाले राज्य में, विधानमंडल के दोनों सदन सत्र में न हों। इन रिट याचिकाओं को जन्म देने वाले तथ्य व्यग्र करने वाले हैं और हम उनका कथन संक्षेप में निम्नलिखित रूप से कर सकते हैं।

2. चार याचियों ने ये रिट याचिकाएं बड़े पैमाने पर अध्यादेशों को प्रख्यापित और पुनः प्रख्यापित करने की बिहार राज्य की परिपाटी की विधिमान्यता को चुनौती देते हुए फाइल की हैं और विशेष रूप से उन्होंने बिहार के राज्यपाल द्वारा जारी किए गए तीन भिन्न अध्यादेशों, अर्थात् (i) बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश 1983 [बिहार फोरेस्ट प्रोड्यूस (रेगुलेशंस ऑफ ट्रेड) थर्ड आर्डिनेंस, 1983], (ii) बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश, 1983 (दि बिहार इंटरमीडिएट एजूकेशन कौंसिल थर्ड आर्डिनेंस, 1983) और (iii) बिहार ईंट प्रदाय (नियंत्रण) तीसरा अध्यादेश, 1983 [दि बिहार ब्रिक्स सप्लाई (कंट्रोल) थर्ड आर्डिनेंस, 1983], की सांविधानिक विधिमान्यता को चुनौती दी है। याची सं० 1 गोखले राजनीति शास्त्र और अर्थशास्त्र संस्थान पुणे में अर्थशास्त्र का प्रोफेसर है और उसने भारतीय राजनीति के सांविधानिक कार्यकरण का अध्ययन करने में अनेक वर्ष व्यतीत किए हैं। देश के प्रशासन के सांविधानिक कार्यकरण के परिरक्षण और संवर्धन में उसकी गहरी रुचि है। उसने विधान-मंडल के अधिनियमों के रूप में अध्यादेशों को अधिनियमित किए बिना समय-समय पर उनके प्रख्यापन की बिहार राज्य द्वारा अपनाई जा रही परिपाटी का गहरा और गंभीर अध्ययन किया है। याची सं० 2 रांची जिले के कुंती थानान्तर्गत अनिगरा ग्राम का अधिभोग रैयत है। वह अपनी रैयत भूमि में वन उपज उगाता है। बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश, 1983 का खंड (5) विनिर्दिष्ट वन उपज के विक्रय पर निर्बंधन अधिरोपित करता है और उसने ऐसी वन उपज के विक्रय और क्रय के लिए राज्य के एकाधिकार का भी सर्जन किया है। इस अध्यादेश के खंड (7) ने राज्य सरकार को वह कीमत नियत करने की शक्ति प्रदत्त की जिस पर विनिर्दिष्ट वन उपज का क्रय उसके द्वारा अथवा किसी प्राधिकृत वन अधिकारी द्वारा या ऐसी वन उपज को उगाने वालों के अभिकर्ता द्वारा किया जा सकता है। बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश के इन उपबंधों के परिणामस्वरूप याची सं० 2 अपनी वन उपज का विक्रय, अध्यादेश में उल्लिखित क्रेताओं से भिन्न किसी क्रेता को करने से निवारित हो गया तथा उसका वन उपज का व्ययन करने का अधिकार इन उपबंधों से प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुआ और इसलिए वह इस अध्यादेश की सांविधानिक विधिमान्यता को चुनौती देने में

1986(12) eILR(PAT) SC 1

हितबद्ध था। याची सं० 3 ए० एन० कालेज, पटना में इंटरमीडिएट (विज्ञान) कक्षा में अध्ययनरत एक छात्र है। वह बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश से प्रभावित हुआ था। इस अध्यादेश के उपबंधों के प्रति निर्देश करना आवश्यक नहीं है, क्योंकि प्रत्यर्थियों की ओर से यह बात गंभीर रूप से विवादग्रस्त नहीं बनाई जा सकी कि इस अध्यादेश के उपबंधों से याची सं० 3 के अधिकार प्रभावित हुए थे, काटे-छांटे गए थे और/या विनियमित हुए थे अथवा उनसे ऐसा होने की संभावना तो थी ही और इसलिए याची सं० 3 ने इस अध्यादेश की सांविधानिक विधिमान्यता को चुनौती दी। इसी प्रकार याची सं० 4 बिहार ईंट प्रदाय (नियंत्रण) तीसरा अध्यादेश से व्यथित हुआ था, क्योंकि वह बिहार सरकार के खनन और उद्योग विभाग द्वारा जारी की गई एक अनुज्ञप्ति के अधीन कार्यरत साउथ बिहार एजेंसी पटना का, जो ईंटों का विनिर्माण करने वाला समुत्थान है, स्वत्वधारी है तथा इस अध्यादेश के उपबंध, जो राज्य सरकार को ईंटों के विनिर्माण, वितरण, परिवहन, व्ययन और उपयोग का तथा उस कीमत का भी, जिस पर ईंटों का क्रय या विक्रय किया जा सकता है, नियंत्रण और विनियमन करने के लिए सशक्त बनाते हैं, याची सं० 4 को प्रभावित करते थे और तद्नुसार वह भी रिट याचिका में सम्मिलित हो गया और उसने इस अध्यादेश की सांविधानिक विधिमान्यता को चुनौती दी।

3. प्रत्यर्थियों की ओर से यह दलील दी गई कि याचियों के पास इन रिट याचिकाओं को पेश करने के संबंध में सुने जाने का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि इन तीन अध्यादेशों में से, जिन्हें याचियों की ओर से चुनौती दी गई है, दो अध्यादेश अर्थात् बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश, 1983 और बिहार ईंट प्रदाय (नियंत्रण) तीसरा अध्यादेश, 1983 पहले ही व्यपगत हो चुके हैं और उनके उपबंध विधानमंडल द्वारा पारित अधिनियमों में अधिनियमित हैं और जहां तक तीसरे अध्यादेश अर्थात् बिहार इंटर-मीडिएट शिक्षा परिषद तीसरा अध्यादेश का संबंध है, उसके उपबंधों को अधिनियम के रूप में अधिनियमित करने के लिए एक विधायी प्रस्ताव पुरःस्थापित किया जा चुका है। प्रत्यर्थियों ने यह भी दलील दी कि याची समय-समय पर अध्यादेशों को पुनः प्रख्यापित करने की बिहार राज्य में प्रचलित परिपाटी को चुनौती देने के हकदार नहीं हैं, क्योंकि वे ऐसे पर-व्यक्ति मात्र हैं जिनका इस परिपाटी की विधिमान्यता को चुनौती देने में कोई विधिक हित नहीं है। हमारी राय में प्रत्यर्थियों की ओर से किया गया यह आरंभिक आक्षेप साधार नहीं है। यह निस्संदेह सच है कि इन रिट याचिकाओं में जिन तीन अध्यादेशों को चुनौती दी गई है, उनमें से दो अध्यादेशों के उपबंध विधानमंडल के अधिनियमों में अधिनियमित कर दिए गए हैं, किंतु ऐसा इन रिट याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान हुआ है और इन रिट याचिकाओं के फाइल किए जाने की तारीख को ये दोनों अध्यादेश बखूबी लागू थे और वे क्रमशः याची सं० 2 और 4 के हित को प्रभावित करते थे। इसके अतिरिक्त बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश अब भी लागू है, यद्यपि इस अध्यादेश के उपबंधों को समाविष्ट करने वाला एक विधेयक राज्य विधानमंडल के समक्ष विचाराधीन है और वह प्रवर समिति को भेज दिया गया है तथा अध्ययन के विशेष पाठ्यक्रम का अनुसरण करने संबंधी याची सं० 3 का अधिकार उस अध्यादेश के उपबंधों द्वारा महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित हुआ है। इसके अतिरिक्त याची सं० 1 राजनीति विज्ञान का प्रोफेसर है और वह सांविधानिक उपबंधों का उचित क्रियान्वयन सुनिश्चित करने में

अत्यधिक हितबद्ध है। अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका को पेश करने में उसका जनता के एक सदस्य के रूप में भी पर्याप्त हित है, क्योंकि प्रत्येक नागरिक का यह आग्रह करने का अधिकार है कि उसको संविधान के अनुसार बनाई गई विधि लागू होनी चाहिए, न कि सांविधानिक उपबंधों का अतिक्रमण करते हुए कार्यपालिका द्वारा बनाई गई विधि। हां, यदि याची सं० 1 किसी विशेष अध्यादेश को चुनौती दे रहा होता, तो उसके पास जनता के एक सदस्य मात्र के रूप में तब तक चुनौती देने के संबंध में सुने जाने का अधिकार न होता, जब तक ऐसे अध्यादेश से उसके किसी विधिक अधिकार का अतिक्रमण न होता अथवा उसके अधिकार का अतिक्रमण होने की आशंका न होती, किंतु यहां याची सं० 1 जनता के एक सदस्य के रूप में जिस चीज के बारे में शिकायत कर रहा है, वह अध्यादेशों के उपबंधों को विधानमंडल के अधिनियमों में अधिनियमित किए बिना उनका समय-समय पर पुन: प्रख्यापन करने की बिहार राज्य द्वारा अनुसरण की जाने वाली परिपाटी है। याची सं० 1 ने स्पष्टत: लोक हित के पुष्टीकरण के लिए ही ये रिट याचिकाएं फाइल की हैं और इसलिए उसकी बाबत यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि वह अपनी रिट याचिकाओं को चलाते रहने का हकदार है। **एस० पी० गुप्त और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में हम में से एक न्यायमूर्ति (तत्कालीन न्यायमूर्ति भगवती) ने निम्नलिखित मताभिव्यक्ति की थी—

> "पर्याप्त हित रखने वाला जनता का कोई भी व्यक्ति लोक कर्तव्य के भंग से अथवा संविधान या विधि के किसी उपबंध के अतिक्रमण से उद्भूत होने वाली लोक क्षति के न्यायिक उपचार की कार्रवाई कर सकता है तथा ऐसे लोक कर्तव्य के पालन की और ऐसे सांविधानिक अथवा विधिक अपबंध के प्रवर्तन की ईप्सा कर सकता है।"

विधिसम्मत शासन हमारे संविधान का केन्द्र-बिंदु है तथा विधिसम्मत शासन का सार यह है कि राज्य द्वारा भले ही वह विधानमंडल हो या कार्यपालिका या कोई अन्य प्राधिकारी, शक्ति का प्रयोग सांविधानिक परिसीमाओं के भीतर होना चाहिए और यदि कार्यपालिका द्वारा कोई ऐसी परिपाटी अपनाई जाती है, जो उसकी सांविधानिक परिसीमाओं का गंभीर और व्यवस्थित रूप से अतिक्रमण करती हो, तो याची सं० 1 जनता के एक व्यक्ति के रूप में रिट याचिका फाइल करके ऐसी परिपाटी को चुनौती देने में पर्याप्त रूप से हितबद्ध होगा तथा इस न्यायालय का यह सांविधानिक कर्तव्य होगा कि वह रिट याचिका पर विचार करे और ऐसी परिपाटी की विधिमान्यता का न्यायनिर्णयन करे। अत: हमें इन रिट याचिकाओं को पेश करने संबंधी याचियों के अधिकार को चुनौती देते हुए प्रत्यर्थियों की ओर से दी गई दलील अस्वीकार करनी चाहिए।

4. इसके पश्चात् प्रत्यर्थियों ने यह दलील दी कि रिट याचिकाओं में न्यायालय के समक्ष उठाया गया प्रश्न हर दशा में सैद्धांतिक प्रकृति का है तथा न्यायालय द्वारा उसका न्यायनिर्णयन नहीं किया जाना चाहिए। किंतु प्रत्यर्थियों की ओर से दी गई इस दलील में भी कोई बल नहीं है, क्योंकि बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश अब भी प्रवृत्त है और इसीलिए उसकी सांविधानिक विधिमान्यता को दी गई चुनौती की परीक्षा

[1] [1982] 4 उम० नि० प० 1=[1982] 2 एस० सी० आर० 365,

करने के लिए उसे सैद्धांतिक नहीं कहा जा सकता। इसके अतिरिक्त इन रिट याचिकाओं में उठाया गया प्रश्न उसी प्रकार सर्वाधिक सांविधानिक महत्व का है जिस प्रकार अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करने संबंधी राज्यपाल की शक्ति, और यह लोक हित में है कि कार्यपालिका यह जाने कि अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन के विषय में राज्यपाल की शक्ति पर कौन-सी परिसीमाएं अधिरोपित हैं। यदि इस प्रश्न का विनिश्चय गुणागुण के आधार पर नहीं किया जाएगा, तो अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करने संबंधी राज्यपाल की शक्ति पर अधिरोपित सांविधानिक परिसीमाओं से संबंधित सही स्थिति अनवधारित बनी रहेगी। हमारे विचार से यह प्रश्न अत्यंत लोक महत्व का है तथा इसका विनिश्चय गुणागुण के आधार पर किया जाना चाहिए ताकि राज्यपाल को समय-समय पर अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करने संबंधी अपनी शक्ति के प्रयोग में मार्गदर्शन प्राप्त हो सके।

5. अब हम यह बताएंगे कि बिहार राज्य के राज्यपाल, अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन की परिपाटी का अनुसरण समय-समय पर किस प्रकार करते रहे हैं जिससे कि उन्हें अनिश्चित कालावधि के लिए जीवित रखा जा सके। याची सं० 1 ने बिहार के राज्यपाल द्वारा समय-समय पर अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन के विषय में सर्वांगपूर्ण और विस्तृत अनुसंधान किया और उसने इस अनुसंधान का परिणाम संकलित किया तथा उसे "रिप्रोमुलगेशन आफ आर्डिनेंसेज : फ्राड आन दी कांस्टीट्यूशन आफ इंडिया" ("अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन : भारत के संविधान के साथ कपट") शीर्षक वाली पुस्तक में प्रकाशित किया। इस पुस्तक के कुछ सुसंगत उद्धरण रिट याचिका के साथ उपाबद्ध हैं जिनसे बिहार के राज्यपाल द्वारा बार-बार प्रख्यापित किए गए अध्यादेशों की संख्या इंगित होती है। इन उद्धरणों के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बिहार के राज्यपाल ने 1967 और 1981 के बीच की कालावधि में 256 अध्यादेश प्रख्यापित किए थे तथा ये अध्यादेश समय-समय पर पुनः प्रख्यापन द्वारा 1 से 14 वर्ष तक की कालावधियों के लिए जीवित रखे गए थे। इन 256 अध्यादेशों में से 69 अध्यादेश अनेक बार पुनः प्रख्यापित किए गए थे और भारत के राष्ट्रपति की पूर्व अनुज्ञा से जीवित रखे गए थे। निम्नलिखित सारणी इन 256 अध्यादेशों के अस्तित्व-काल समूहों के प्रति निर्देश करते हुए, उनके प्रवर्गीकरण को उपदर्शित करेगी—

अस्तित्वकाल-समूह वर्ष	अध्यादेश की संख्या
1	2
1 तक	59
1-2	51
2-3	45
3-4	21
4-5	21
5-6	21

1986(12) eILR(PAT) SC 1

1	2
6-7	11
7-8	8
8-9	4
9-10	4
10-11	6
11-12	4
12-13	—
13-14	1
कुल	256

यदि हम ऐसे कुछ अध्यादेशों पर, जिन्हें पुनः प्रख्यापन की पद्धति से प्रवृत्त बने रहने दिया गया था, दृष्टिपात करें, तो स्थिति की घोरता आश्चर्यचकित कर देने वाली प्रतीत होगी। निम्नलिखित सारणी प्रत्येक अध्यादेश के विषय में, अध्यादेश के शीर्षक, उसके प्रथम प्रख्यापन की तारीख और उस कुल कालवधि को, जिसके लिए पुनः प्रख्यापन की नीति अपना कर अध्यादेश को प्रवृत्त बनाए रखा गया, उपदर्शित करती है—

क्र० सं०	अध्यादेश का नाम	वह तारीख जिसको प्रथम बार प्रख्यापित किया गया	अध्यादेश का अस्तित्वकाल		
1	2	3	4		
			वर्ष	मास	दिन
i.	बिहार गन्ना (प्रदाय और क्रय का विनियमन) अध्यादेश, 1968 (1968 का अध्यादेश सं० 3)	13-11-1968	13	11	19
ii.	बिहार पंचायती राज (संशोधन और विधिमान्यकरण) अध्यादेश, 1970 (1970 का अध्यादेश सं० 3)	14-8-1970	11	4	18
iii.	बिहार हिंदू धार्मिक न्यास (संशोधन) अध्यादेश, 1970 (1970 का अध्यादेश सं० 5)	5-9-1970	11	3	26

1	2	3	4		
			वर्ष	मास	दिन
iv.	उद्योगों को राजकीय सहायता (संशोधन) अध्यादेश, 1970 (1970 का अध्यादेश सं० 8)	10-9-1970	11	3	21
v.	बिहार खादी और ग्रामोद्योग (संशोधन) अध्यादेश, 1970 (1970 का अध्यादेश सं० 9)	17-9-1970	11	3	14
vi.	बिहार भूमि और जल संरक्षण तथा भूमि विकास अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 16)	10-2-1971	10	10	19
vii.	बिहार पंचायती राज (संशोधन) अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 54)	15-5-1971	10	7	17
viii.	बिहार नगरपालिक (तीसरा संशोधन) अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 57)	20-5-1971	10	7	12
ix.	पटना नगरपालिक निगम (संशोधन) अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 58)	22-5-1971	10	7	10
x.	बिहार राज्य आवास बोर्ड अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 101)	14-9-1971	10	3	17
xi.	बिहार सरकारी सोसाइटी (द्वितीय संशोधन) अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 103)	7-10-1971	10	2	25
xii.	बिहार कृषि उपज बाजार (संशोधन) अध्यादेश, 1972 (1972 का अध्यादेश सं० 6)	14-12-1972	9	10	16
xiii.	बिहार आयुर्विज्ञान शिक्षा संस्थान (विनियमन और नियंत्रण) अध्यादेश, 1972 (1972 का अध्यादेश सं० 69)	14-5-1972	9	7	18

1	2	3	4		
			वर्ष	मास	दिन
xiv	राजेंद्र कृषि विश्वविद्यालय (संशोधन) अध्यादेश, 1973 (1973 का अध्यादेश सं० 2)	15-1-1973	8	11	17
xv.	बिहार पंचायती राज (विधि-मान्यकरण) अध्यादेश, 1973 (1973 का अध्यादेश सं० 5)	22-2-1973	8	10	7
xvi.	बिहार पंचायत समिति और जिला परिषद् (संशोधन और विधिमान्यकरण) अध्यादेश, 1973 (1973 का अध्यादेश सं० 6)	22-2-1973	8	10	7
xvii.	बिहार खादी और ग्रामोद्योग (संशोधन) अध्यादेश, 1973 (1973 का अध्यादेश सं० 122)	1-10-1973	8	3	0
xviii.	मोटर यान (बिहार संशोधन) अध्यादेश, 1971 (1971 का अध्यादेश सं० 56)	20-5-1971	7	8	17
xix.	उद्योगों को बिहार राज्य की सहायता (द्वितीय संशोधन) अध्यादेश, 1974 (1974 का अध्यादेश सं० 56)	27-4-1974	7	8	4
xx.	बिहार सिंचाई विधि (संशोधन) अध्यादेश, 1974 (1974 का अध्यादेश सं० 169)	27-8-1974	7	4	3
xxi.	बिहार सिंचाई क्षेत्रसरणि (संशोधन) अध्यादेश, 1974 (1974 का अध्यादेश सं० 170)	29-8-1974	7	4	3
xxii.	बिहार भूमि और जल संरक्षण और भूमि विकास (संशोधन) अध्यादेश, 1974 (1974 का अध्यादेश सं० 174)	16-9-1974	7	3	15

1986(12) eILR(PAT) SC 1

1	2	3	4		
			वर्ष	मास	दिन
xxiii.	बिहार ग्रामदान (संशोधन) अध्यादेश, 1972 (1972 का अध्यादेश सं० 12)	26-2-1972	6	5	27
xxiv.	बिहार प्राथमिक शिक्षा (संशोधन) अध्यादेश, 1970 (1970 का अध्यादेश सं० 6)	5-9-1970	6	3	26
xxv.	बिहार क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अध्यादेश, 1974 (1974 का अध्यादेश सं० 175)	19-9-1974	6	3	12
xxvi.	छोटा नागपुर और संथाल परगना स्वायत्त विकास प्राधिकरण (पांचवां संशोधन) अध्यादेश, 1975 (1975 का अध्यादेश सं० 197)	29-10-1974	6	2	3
xxvii.	बिहार मोटर यान कराधान (पांचवां संशोधन) अध्यादेश, 1975 (1975 का अध्यादेश सं० 207)	29-11-1975	6	1	2
xxviii.	बिहार प्रकरण (संशोधन) अध्यादेश, 1975 (1975 का अध्यादेश सं० 209)	2-12-1975	6	1	0
xxix.	बिहार सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण (संशोधन) अध्यादेश, 1975 (1975 का अध्यादेश सं० 210)	5-12-1975	6	0	27
xxx.	बिहार मोटर यान कराधान (छठा संशोधन) अध्यादेश, 1975 (1975 का अध्यादेश सं० 212)	5-12-1975	6	0	27
xxxi.	बिहार मोटर यान कराधान (सातवां संशोधन) अध्यादेश, 1975 (1975 का अध्यादेश सं० 214)	5-12-1975	6	0	27

1986(12) eILR(PAT) SC 1

इस प्रकार यह देखा जाएगा कि बिहार सरकार ने अध्यादेशों का प्रख्यापन करने की शक्ति का उपयोग बड़े पैमाने पर किया था, तथा राज्य विधानमंडल का सत्रावसान होने के पश्चात् वही अध्यादेश, जो लागू न रह गए थे, लगभग नेमी रीति से, सारतः उन्हीं उपबंधों को अंतर्विष्ट करते हुए पुनः प्रख्यापित कर दिए गए। यह बात इस तथ्य से स्पष्ट होगी कि बिहार के राज्यपाल ने 26 अगस्त, 1973 को उन्हीं उपबंधों वाले 54 अध्यादेश, 17 जनवरी, 1973 को सारतः उन्हीं उपबंधों वाले 49 अध्यादेश, 27 अप्रैल, 1974 को 7 अध्यादेश और 29 अप्रैल, 1974 को सारतः उन्हीं उपबंधों वाले 9 अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए। तत्पश्चात् 23 जुलाई, 1974 को 51 अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए गए जिनमें वें ही अध्यादेश सम्मिलित थे जो 27 और 29 अप्रैल, 1974 को प्रख्यापित किए जा चुके थे। 18 मार्च, 1979 को 52 अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए गए थे, जबकि 18 अगस्त, 1979 को सारतः उन्हीं उपबंधों वाले 51 अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए गए थे। 28 अप्रैल, 1979 को 49 और 18 अगस्त, 1979 को 51 अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए गए थे। विधानमंडल का सत्रावसान हो जाने के पश्चात् अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन की यह प्रक्रिया अबाध गति से चलती रही और 11 अगस्त, 1980 को 49 अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए गए, जबकि 19 जनवरी, 1981 को पुनः प्रख्यापित किए जाने वाले अध्यादेशों की संख्या 53 थी। निम्नलिखित सारणी यह दर्शित करती है कि एक ही अध्यादेश उसके उपबंधों को प्रवृत्त रखने के उद्देश्य से कितनी बार पुनः प्रख्यापित किया गया—

अध्यादेश का नाम	प्रथम प्रख्यापन की तारीख	प्रख्यापन की अंतिम तारीख	कितनी बार पुनः प्रख्यापित किया गया	अध्यादेश का कुल अस्तित्वकाल
1	2	3	4	5
1. बिहार गन्ना (प्रदाय और क्रय का विनियमन) अध्यादेश, 1968	13-1-68	12-8-81	39	लगभग 14 वर्ष
2. बिहार पंचायत राज (संशोधन और विधिमान्यकरण) अध्यादेश, 1970	14-8-70	19-1-81	35	लगभग 12 वर्ष
3. बिहार हिन्दू धार्मिक न्यास (संशोधन) अध्यादेश, 1970	5-9-70	22-4-81	37	लगभग 12 वर्ष
4. उद्योगों को बिहार राज्य की सहायता (संशोधन) अध्यादेश, 1970	10-9-70	23-4-81	34	लगभग 12 वर्ष
5. बिहार खादी और ग्रामोद्योग (संशोधन) अध्यादेश, 1970	17-9-70	19-1-81	35	लगभग 12 वर्ष

यहां यह बात इंगित की जा सकती है कि इन रिट याचिकाओं में जिन तीन अध्यादेशों को चुनौती दी गई है, उनके संबंध में भी समय-समय पर पुनः प्रख्यापन की प्रक्रिया अपनाई गई। बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश प्रथम बार सन् 1977 में प्रख्यापित किया गया और उसके अवसान के पश्चात् वह राज्य विधानमंडल द्वारा पारित किसी अधिनियम के रूप में परिवर्तित न किया जाकर अनेक बार पुनः प्रख्यापित किया गया और वह 17 मई, 1984 को 1984 के बिहार अधिनियम सं० 12 द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने तक प्रवृत्त बना रहा। जहां तक बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश का संबंध है, वह आरंभ में सन् 1982 में प्रख्यापित किया गया और उसके अवसान के पश्चात् वह उन्हीं उपबंधों सहित बिहार के राज्यपाल द्वारा चार बार पुनः प्रख्यापित किया गया और अंततोगत्वा, उसे 6 जून, 1985 को व्यपगत होने दिया गया, किंतु उस समय बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् अध्यादेश, 1985 प्रख्यापित कर दिया गया जिसमें लगभग बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश के ही उपबंध अंतर्विष्ट थे। इसी प्रकार बिहार ईंट प्रदाय (नियंत्रण) तीसरा अध्यादेश आरंभ में सन् 1979 में प्रख्यापित किया गया और उसके अवसान के पश्चात् वह बिहार के राज्यपाल द्वारा पुनः प्रख्यापित किया गया तथा वह 17 मई, 1984 तक, जब वह 1984 के बिहार अधिनियम सं० 13 द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया, प्रवृत्त बना रहा। इस प्रकार बिहार वन उपज (व्यापार का विनियमन) तीसरा अध्यादेश 6 से अधिक वर्ष की कालावधि तक, बिहार इंटर-मीडिएट शिक्षा परिषद् तीसरा अध्यादेश एक से अधिक वर्ष की कालावधि तक तथा बिहार ईंट प्रदाय (नियंत्रण) तीसरा अध्यादेश 5 से अधिक वर्ष की कालावधि तक प्रवृत्त रहा।

6. यह प्रतीत होता है कि बिहार सरकार ने समय-समय पर अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करते रहने की सुस्थिर परिपाटी बना ली थी और ऐसा जान-बूझकर व्यवस्थित रूप से किया गया था। राज्य विधानमंडल के सत्रावसान होने के अव्यवहित पश्चात्, संसदीय कार्य विभाग के विशेष सचिव द्वारा सभी आयुक्तों, सचिवों, विशेष सचिवों, अपर सचिवों और सभी विभाग अध्यक्षों को यह प्रज्ञापित करते हुए एक परिपत्र भेजा जाया करता था कि विधानमंडल का सत्रावसान करा लिया गया है और संविधान के अनुच्छेद 213 के खंड 2(क) के अधीन सभी अध्यादेश विधानमंडल के पुनः समवेत होने की तारीख से 6 सप्ताह पश्चात् प्रवृत्त नहीं रह जाएंगे, और वे विधि विभाग से सम्पर्क बनाए रखें तथा "सभी संबद्ध अध्यादेशों को पुनः प्रख्यापित कराने के लिए" तत्काल कार्रवाई आरंभ करें, ताकि सभी अध्यादेश अपना अवसान होने की तारीख से पहले निश्चित रूप से पुनः प्रख्यापित कराए जा सकें। इस परिपत्र में अधिकारियों को यह सलाह भी दी जाया करती थी कि यदि पुराने अध्यादेश किसी संशोधन के बिना उनके मूल रूप में पुनः प्रख्यापित किए जाने हों तो मंत्रिपरिषद् का अनुमोदन आवश्यक नहीं होगा। याचियों ने तारीख 29 जुलाई, 1981 के एक ऐसे परिपत्र की प्रति न्यायालय के समक्ष रखी जिसमें संसूचना का विषय "अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन के संबंध में" के रूप में वर्णित था। तारीख 29 जुलाई, 1981 के इस परिपत्र को यथावत् उद्धृत करना लाभदायक होगा, क्योंकि इसमें वह नेमी रीति इंगित है जिससे बिहार के राज्यपाल ने अध्यादेश पुनः प्रख्यापित किए थे—

"पत्र सं० सं० का०/प्रकीर्ण 1040/80-872

बिहार सरकार

संसदीय कार्य विभाग

प्रेषक : बसंत कुमार दूबे,
विशेष सचिव, बिहार सरकार

सेवा में : सभी आयुक्त और सचिव,
सभी विशेष सचिव,
सभी अपर सचिव,
सभी विभाग अध्यक्ष

पटना-15—ता० 29 जुलाई, 1981

विषय : अध्यादेशों के पुनः प्रख्यापन के संबंध में।

महोदय,

मुझे यह कहने का निदेश हुआ है कि 28 जुलाई, 1981 को दोनों सदनों का काम-काज पूरा हो जाने के पश्चात् विधानमंडल के बजट सत्र (जून-जुलाई, 1981) का अवसान करा लिया गया है।

विधानमंडल के पुनः समवेत होने की तारीख से 6 सप्ताह पश्चात् सभी अध्यादेश संविधान के अनुच्छेद 213(2)(क) के उपबंधों के अधीन प्रवृत्त नहीं रहते। इस बार विधान सभा का सत्र 29 जून, 1981 को तथा विधान परिषद् का सत्र 1 जुलाई, 1981 को आरंभ हुआ है। अतः 1 जुलाई, 1981 से 6 सप्ताह अर्थात् 42 दिन 11 अगस्त, 1981 को पूरे हो जाएंगे और यदि वे उपर्युक्त तारीख से पहले पुनः प्रख्यापित नहीं किए जाते, तो सभी अध्यादेश 11 अगस्त, 1981 के पश्चात् प्रवृत्त नहीं रहेंगे।

अतः यह अनुरोध किया जाता है कि विधि विभाग से संपर्क किया जाए तथा सभी संबद्ध अध्यादेशों को पुनः प्रख्यापित कराने की कार्रवाई तत्काल आरंभ की जाए ताकि वे 11 अगस्त, 1981 से पूर्व निश्चित रूप से पुनः प्रख्यापित हो जाएं।

यदि पुराने अध्यादेश किसी संशोधन के बिना अपने मूल रूप में ही प्रख्यापित किए जाते हैं, तो मंत्रिपरिषद् का अनुमोदन आवश्यक नहीं है।

इसे सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए तथा तत्काल आवश्यक कार्रवाई की जानी चाहिए।

भवदीय

ह०/बसंत कुमार दूबे

विशेष सचिव, बिहार सरकार"

1986(12) eILR(PAT) SC 1

यह परिपत्र स्पष्ट रूप से संदेह से परे यह दर्शित करता है कि अध्यादेश इस बात की परवाह किए बिना कि वे विधानमंडल के अधिनियमों द्वारा प्रतिस्थापित कराए जाने हैं या इस बात पर विचार किए बिना कि वैसी परिस्थितियां विद्यमान हैं या नहीं, जिनमें राज्यपाल को अध्यादेशों का पुनः प्रख्यापन करके तत्काल कार्रवाई करने की आवश्यकता पड़ गई है, नेमी रीति से बड़े पैमाने पर पुनः प्रख्यापित किए गए। सरकार इस आधार पर अग्रसर होती प्रतीत हुई थी कि विधानमंडल में किसी विधान को पुरःस्थापित करना आवश्यक नहीं है किंतु सरकार समय-समय पर राज्यपाल से अध्यादेश पुनः प्रख्यापित कराकर विधि बनाती रह सकती है। प्रश्न यह है कि क्या बिहार सरकार द्वारा अपनाई गई यह परिपाटी इस आधार पर न्यायोचित ठहराई जा सकती थी कि वह अध्यादेश का प्रख्यापन करने की उस शक्ति के विधिसम्मत प्रयोग का प्रतिनिधित्व करती है जो संविधान के अनुच्छेद 213 के अधीन राज्यपाल को प्रदत्त की गई है।

7. इस प्रश्न का अवधारण अनुच्छेद 213 के, जो किसी राज्य के राज्यपाल को अध्यादेश प्रख्यापित करने की शक्ति प्रदत्त करता है, सही निर्वचन पर निर्भर है। जहां तक यह अनुच्छेद तात्विक है, वह निम्नलिखित रूप में है—

> "213. (1) उस समय को छोड़कर जब किसी राज्य की विधान सभा सत्र में है या विधान परिषद् वाले राज्य में विधानमंडल के दोनों सदन सत्र में हैं, यदि किसी समय राज्यपाल का यह समाधान हो जाता है कि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान हैं जिनके कारण तुरंत कार्रवाई करना उसके लिए आवश्यक हो गया है तो वह ऐसे अध्यादेश प्रख्यापित कर सकेगा जो उसे उन परिस्थितियों में अपेक्षित प्रतीत हों;
>
> ....
>
> (2) इस अनुच्छेद के अधीन प्रख्यापित अध्यादेश का वही बल और प्रभाव होगा जो राज्य के विधानमंडल के ऐसे अधिनियम का होता है जिसे राज्यपाल ने अनुमति दे दी है, किंतु प्रत्येक ऐसा अध्यादेश—
>
> (क) राज्य की विधान सभा के समक्ष और विधान परिषद् वाले राज्य में दोनों सदनों के समक्ष रखा जाएगा तथा विधानमंडल के पुनः समवेत होने से छह सप्ताह की समाप्ति पर या यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले विधान सभा उसके अननुमोदन का संकल्प पारित कर देती है और यदि विधान परिषद् है तो वह उससे सहमत हो जाती है तो, यथास्थिति, संकल्प पारित होने पर या विधान परिषद् द्वारा संकल्प से सहमत होने पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा;
>
> (ख) राज्यपाल द्वारा किसी भी समय वापस लिया जा सकेगा।
>
> **स्पष्टीकरण**—जहां विधान परिषद् वाले राज्य के विधानमंडल के सदन भिन्न-भिन्न तारीखों में पुनः समवेत होने के लिए आहूत किए जाते हैं वहां इस खंड के प्रयोजनों के लिए, छह सप्ताह की अवधि की गणना उन तारीखों में से पश्चात्-वर्ती तारीख से की जाएगी।"

1986(12) eILR(PAT) SC 1

अध्यादेश जारी करने के लिए राज्यपाल को प्रदत्त शक्ति आपत्कालीन शक्ति की प्रकृति की है जो राज्यपाल में इस उद्देश्य से निहित की गई है कि वह तब, जब विधानमंडल सत्र में न हो, आवश्यकता पड़ने पर तात्कालिक कार्रवाई कर सके। संविधान के अधीन विधि बनाने वाला प्राथमिक प्राधिकरण विधानमंडल है, न कि कार्यपालिका, किंतु विधानमंडल के सत्र में न होने की दशा में, ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न होनी संभव हैं जिनमें तात्कालिक कार्रवाई करनी आवश्यक हो और ऐसी दशा में आपत्कालीन स्थिति से निपटने के लिए विधि बनाने में विधानमंडल की असमर्थता के कारण लोक हित को क्षतिग्रस्त न होने देने के उद्देश्य से राज्यपाल में अध्यादेश प्रख्यापित करने की शक्ति निहित की गई है। किंतु राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित प्रत्येक अध्यादेश विधानमंडल के समक्ष रखा जाना चाहिए तथा वह विधानमंडल के पुनः समवेत होने की तारीख से छह सप्ताह की अवधि समाप्त हो जाने पर या उस अवधि के समाप्त होने से पूर्व उसे अननुमोदित करने वाला विधान सभा द्वारा पारित और विधान परिषद् द्वारा सम्मत कोई संकल्प पारित कर दिए जाने पर लागू नहीं रहेगा। इस उपबंध का उद्देश्य यह है कि चूंकि अध्यादेश जारी करने के लिए राज्यपाल को प्रदत्त शक्ति विधानमंडल के सत्र में न होने की दशा में प्रयोक्तव्य आपत्कालीन शक्ति है, इसलिए तात्कालिक कार्रवाई की अपेक्षा करने वाली किसी स्थिति से निपटने के लिए राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित किसी ऐसे अध्यादेश का, जिसके लिए विधानमंडल के पुनः समवेत होने की प्रतीक्षा नहीं की जा सकती, अस्तित्वकाल आवश्यक रूप से परिसीमित होना चाहिए। चूंकि अनुच्छेद 174 में यह आदिष्ट है कि विधानमंडल एक वर्ष में कम-से-कम दो बार अपना अधिवेशन करेगा, किंतु उसके एक सत्र की अंतिम बैठक और आगामी सत्र की प्रथम बैठक के लिए नियत तारीख के बीच छह मास का अंतर नहीं होगा तथा राज्यपाल द्वारा जारी किया गया कोई अध्यादेश विधानमंडल के पुनः समवेत होने की तारीख से छह सप्ताह की अवधि की समाप्ति पर प्रवर्तित नहीं रहेगा, इसलिए यह स्पष्ट है कि किसी अध्यादेश का अधिकतम अस्तित्वकाल साढ़े सात मास से अधिक तब तक नहीं हो सकता, जब तक वह विधानमंडल के किसी अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित न कर दिया जाए या उस अवधि की समाप्ति से पूर्व विधानमंडल के संकल्प द्वारा अननुमोदित न कर दिया जाए। अध्यादेश का प्रख्यापन करने की शक्ति निश्चित रूप से एक ऐसी शक्ति है जिसका उपयोग किसी असाधारण स्थिति से निपटने के लिए किया जाता है तथा उसे "राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए दूषित" नहीं होने दिया जा सकता। यह बात कि कार्यपालिका के पास विधि बनाने की शक्ति होनी चाहिए, सभी लोकतांत्रिक मानदंडों के प्रतिकूल है, किंतु किसी आपत्कालीन स्थिति से निपटने के लिए यह शक्ति राज्यपाल को प्रदत्त की गई है और इसलिए इस शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्यपाल द्वारा जारी किया गया कोई अध्यादेश समय की दृष्टि से आवश्यक रूप से परिसीमित होना चाहिए। यही कारण है कि यह उपबंध किया गया है कि विधानमंडल के समवेत होने की तारीख से छह सप्ताह की समाप्ति पर अध्यादेश लागू नहीं रहेगा। संविधान के निर्माताओं को यह आशा थी कि यदि अध्यादेश के उपबंध प्रवृत्त रखे जाने हैं, तो आवश्यक अधिनियम पारित करने के लिए विधानमंडल के लिए यह समय पर्याप्त होना चाहिए। यदि इस समय के भीतर विधानमंडल ऐसा कोई अधिनियम पारित नहीं करता तो अध्यादेश समाप्त हो जाना चाहिए। कार्यपालिका विधानमंडल का आश्रय लिए बिना अध्यादेश के उपबंधों को प्रवृत्त बनाए नहीं रख सकती। संविधान ने विधि-निर्माण का कर्तव्य विधानमंडल को सौंपा है जिसमें जनता के प्रतिनिधि होते हैं और

यदि कार्यपालिका को पुनः प्रख्यापन की रीति अपनाकर किसी अध्यादेश के उपबंधों को प्रवृत्त बनाए रखने की अनुमति दे दी जाए और अध्यादेश को विधानमंडल के मत के लिए प्रस्तुत न किया जाए, तो ऐसा करना विधानमंडल का विधि बनाने संबंधी कृत्य का कार्यपालिका द्वारा हड़प लिए जाने से किसी प्रकार भी कम नहीं होगा। कार्यपालिका, विधानमंडल के सत्र में न होने की दशा में ही प्रयोक्तव्य अपनी आपत्कालीन शक्ति का अवलंब लेकर, विधानमंडल का विधि बनाने संबंधी कार्य ग्रहण नहीं कर सकती। ऐसा करना लोकतांत्रिक प्रक्रिया को, जो अब सांविधानिक स्कीम के मर्म में है, स्पष्ट रूप से ध्वस्त करना होगा, क्योंकि उस दशा में लोग सांविधानिक उपबंधों के अनुसार विधानमंडल द्वारा निर्मित विधि से नहीं, बल्कि कार्यपालिका द्वारा निर्मित विधि से शासित होंगे। सरकार विधानमंडल की उपेक्षा नहीं कर सकती तथा अध्यादेश के उपबंधों को विधानमंडल द्वारा पारित किसी अधिनियम में अधिनियमित किए बिना, विधानमंडल का सत्रावसान होते ही अध्यादेश का पुनः प्रख्यापन नहीं कर सकती। हां, ऐसी कोई स्थिति हो सकती है जिसमें अध्यादेश के उपबंधों वाला कोई विधेयक विधानमंडल में पुरःस्थापित करना और उसे वहां पारित कराना, विधानमंडल के पास किसी विशेष सत्र में अत्यधिक विधायी कारबार होने अथवा किसी विशेष सत्र में विधानमंडल के पास कम समय होने के कारण सरकार के लिए संभव न हो और उस दशा में राज्यपाल विधिसम्मत रूप से यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अध्यादेश को पुनः प्रख्यापित करना आवश्यक है। ऐसी स्थिति में, अध्यादेश के पुनः प्रख्यापन पर आक्षेप करने की छूट नहीं है। किंतु अन्यथा किसी अध्यादेश को पुनः प्रख्यापन की पद्धति अपना कर संविधान द्वारा परिसीमित अवधि से परे सारतः उन्हीं उपबंधों सहित बनाए रखना कार्यपालिका द्वारा शक्ति का आभासी प्रयोग होगा। यह सुस्थिर विधि है कि सांविधानिक प्राधिकारी उस कार्य को परोक्षतः नहीं कर सकता जिसे वह प्रत्यक्षतः करने के लिए अनुज्ञात नहीं है। यदि सांविधानिक प्राधिकारी को कोई कार्य करने से निषिद्ध करने वाला कोई उपबंध हो, तो ऐसे उपबंध को कोई बहाना बनाकर विफल नहीं होने दिया जा सकता। ऐसा करना स्पष्ट रूप से सांविधानिक उपबंध के साथ कपट करना होगा। निश्चित रूप से यही बात न्यायमूर्ति मुखर्जी ने **के० जी० गजपति नारायण देव और अन्य** बनाम **उड़ीसा राज्य**[1] वाले मामले में न्यायालय की ओर से निर्णय सुनाते हुए कही थी—

> "दूसरे शब्दों में, अधिनियम का सार ही तात्विक है, न कि उसका प्ररूप अथवा बाह्य प्रतीति और यदि उसकी विषय-वस्तु सारतः कोई ऐसी चीज है जिसके संबंध में विधानमंडल के पास विधान बनाने की शक्ति नहीं है, तो उसका प्ररूप जिसमें विधि आवृत है, उसे निन्दा से नहीं बचाएगा। विधानमंडल परोक्ष तरीका अपना कर सांविधानिक प्रतिषेधों का अतिक्रमण नहीं कर सकता।"

इसी प्रकार **पी० वज्रवेलु मुदालियर** बनाम **विशेष उप-कलक्टर, मद्रास और एक अन्य**[2] वाले मामले में भी इस न्यायालय की संविधान न्यायपीठ ने यह मताभिव्यक्ति की थी कि जब किसी विधान को आभासी विधान कहा जाता है, तब उससे यह अभिप्रेत होता है कि विधानमंडल ने किसी गुप्त अथवा परोक्ष रीति से अपनी विधायी शक्ति का अतिक्रमण

---

[1] [1954] 1 एस० सी० आर० 1.

[2] [1965] 1 एस० सी० आर० 614.

1986(12) eILR(PAT) SC 1

उस दशा में किया है यदि उसने अपनी शक्ति की सीमाओं से बाहर जाने के लिए कोई युक्ति अपनाई हो। जब सांविधानिक उपबंध में यह अनुबंध होता है कि किसी आपत्कालीन स्थिति से निपटने के लिए राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित कोई अध्यादेश विधानमंडल के पुनः समवेत होने की तारीख से छह सप्ताह की अवधि समाप्ति पर लागू नहीं रहेगा और यदि सरकार अध्यादेश के उपबंधों को छह सप्ताह की उक्त अवधि के पश्चात् भी जारी रखना चाहे, तो उसे विधानमंडल के समक्ष जाना होगा जो कि एक ऐसा सांविधानिक प्राधिकरण है जिसे विधि बनाने का कार्य सौंपा गया है, तो निश्चित रूप से विधानमंडल की अवहेलना करने और अध्यादेश को पुनः प्रख्यापित करने के लिए सरकार की ओर से शक्ति का आभासी प्रयोग होगा और परिणामतः कार्यपालिका द्वारा किए गए अध्यादेश के माध्यम से नागरिकों के जीवन और स्वाधीनता का विनियमन करते रहना होगा। चूंकि ऐसी नीति कार्यपालिका को किसी आपत्कालीन स्थिति में विधि बनाने के मामले में अपनी सांविधानिक परिसीमा का अतिक्रमण करने तथा विधि बनाने संबंधी विधानमंडल के कार्य को गुप्त और परोक्ष रूप से स्वयं करने में समर्थ बनाएगी, इसलिए वह सांविधानिक स्कीम की विरोधी होगी।

8. बिहार राज्य की ओर से हाजिर होने वाले श्री लाल नारायण सिन्हा ने यह निवेदन किया कि न्यायालय किसी अध्यादेश की विधिमान्यता का अवधारण करने के प्रयोजनार्थ इस बात की परीक्षा करने का हकदार नहीं है कि अनुच्छेद 213 के अधीन राज्यपाल की शक्ति के प्रयोग के लिए पुरोभाव्य शर्तें विद्यमान हैं अथवा नहीं और इस प्रतिपादना के समर्थन में उसने **भगतसिंह और अन्य** बनाम **एम्पायर**[1], **राजाराम बहादुर कमलेश नारायण सिंह** बनाम **आय-कर आयुक्त**[2], **लक्ष्मीधर मिश्र** बनाम **रंगलाल और अन्य**[3] और **आर० सी० कूपर** बनाम **भारत संघ**[4] वाले मामलों में के विनिश्चयों का दृढ़तापूर्वक अवलंब लिया। हम नहीं समझते कि प्रस्तुत मामले में ये विनिश्चय किस प्रकार सहायक हो सकते हैं। वे उस प्रश्न के संबंध में तनिक भी व्यपहृत नहीं होते जिसका विनिश्चय करने की हमसे अपेक्षा की गई है। यह सच है कि प्रिवी कौंसिल और इस न्यायालय के विनिश्चयों के अनुसार न्यायालय अध्यादेश जारी करने के संबंध में राज्यपाल के समाधान के प्रश्न की जांच नहीं कर सकता, किंतु प्रस्तुत मामले में अंतर्ग्रस्त प्रश्न से राज्यपाल के समाधान के संबंध में कोई संविवाद उत्पन्न नहीं होता। एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या राज्यपाल के पास एक ही अध्यादेश को विधानमंडल के समक्ष लाए बिना, उसे क्रमिक रूप से पुनः प्रख्यापित करने की शक्ति है? स्पष्टतः राज्यपाल ऐसा नहीं कर सकते। वे संविधान में वर्णित तथा कठोरतः सुनिश्चित परिसीमाओं के आधिक्य में विधायी कृत्य का ग्रहण नहीं कर सकते क्योंकि अन्यथा वे किसी ऐसे कार्य को हड़प लेंगे जिसका उनसे संबंध नहीं है। यहां इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि यद्यपि भारत के राष्ट्रपति को संविधान के अनुच्छेद 123 के अधीन अध्यादेश जारी करने की वही शक्ति प्राप्त है जो राज्यपाल को अनुच्छेद 213 के अधीन प्राप्त है, तो भी 1950 से लेकर आज तक एक भी दृष्टांत ऐसा

1 ए० आई० आर० 1931 प्रि० कौं० 111.
2 ए० आई० आर० 1943 प्रि० कौं० 153.
3 ए० आई० आर० 1950 प्रि० कौं० 59.
4 [1974] 3 उम० नि० प० 1045=[1970] 3 एस० सी० आर० 530.

नहीं है, जब उन्होंने कोई अध्यादेश उसकी अवधि की समाप्ति के पश्चात् पुनः प्रख्यापित किया हो। हमने आश्चर्यचकित करने वाले जिन तथ्यों का ऊपर उल्लेख किया है, उनसे स्पष्ट रूप से यह दर्शित होता है कि बिहार की कार्यपालिका ने विधि बनाने की दिशा में विधानमंडल की लगभग संपूर्ण भूमिका, सांविधानिक परिसीमाओं की अवहेलना करते हुए, किसी परिसीमित अवधि के लिए नहीं, बल्कि एक साथ अनेक वर्षों तक स्वयं निभाई है। यह स्पष्ट रूप से सांविधानिक स्कीम के प्रतिकूल है और उसे अनुचित तथा अविधिमान्य अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए। हमें आशा और विश्वास है कि यह परिपाटी भविष्य में जारी नहीं रखी जाएगी और जब भी कोई अध्यादेश जारी किया जाएगा तथा सरकार विधानमंडल के समवेत होने के पश्चात् अध्यादेश के उपबंधों को प्रवृत्त रखना चाहेगी, तब उन उपबंधों को अधिनियम का रूप देने के लिए विधानमंडल के समक्ष एक विधेयक लाना होगा। देश में अध्यादेश-राज नहीं होना चाहिए।

9. तदनुसार, हम बिहार इंटरमीडिएट शिक्षा परिषद् अध्यादेश, 1985 को, जो अब भी लागू है, इस आधार पर अभिखंडित करते हैं कि वह असांविधानिक और शून्य है। चूंकि याची सं० 1 काफी अनुसंधान करने के पश्चात् बिहार सरकार की भर्त्सना करने योग्य यह परिपाटी न्यायालय के ध्यान में लाया है, इसलिए हम बिहार राज्य को यह निदेश देंगे कि वह याची सं० 1 को 10,000 रुपए (दस हजार रुपए मात्र) की धनराशि का संदाय इन रिट याचिकाओं के खर्चे के रूप में करे।

रिट याचिकाएं मंजूर की गईं।

अ०/श्री०

[1987] 2 उम० नि० प० 775

मोहम्मद मुमताज

बनाम

श्रीमती नंदिनी सत्पथी और अन्य

20 दिसंबर, 1986

मुख्य न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती, न्यायमूर्ति ई० एस० वेंकटरामय्या, वी० खालिद, जी० एल० ओझा और एस० नटराजन

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 321—अभियोजन वापस लिए जाने का प्रश्न—पुलिस रिपोर्ट के आधार पर प्रारंभ किए गए वारंट मामले में पूर्व मुख्यमंत्री के विरुद्ध अभियोजन वापस ले लिया गया था—आवेदन वापस लिए जाने के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा सम्मति दी गई तथा उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण में उसकी पुष्टि की गई—बहुमत के द्वारा तथ्यों के आधार पर संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन